म. एम. कुमार और जसवन्त सिंह न्यायमूर्ति के समक्ष

जी एल बत्रा. -याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य – प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी.नं. 1997 का 13029

4 नवंबर 2009

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 14, 16 एवं 226-हरियाणा लोक सेवा आयोग (सेवा की शर्तें) विनियम, 1972- रजि. 6-पंजाब राज्य लोक सेवा (सेवा की शर्तें) विनियम, 1958—रेग। 5(1)- दो अलग-अलग वर्ग- गैर- पेंशनभोगी और पुनः नियोजित पेंशनभोगी-वेतन का निर्धारण अलग-अलग-सेवा के दौरान वैध वर्गीकरण पर विचार करने वाले विनियम कर्मचारी और पुनर्नियुक्त पेंशनभोगी-इस पर नाराज़ होने का कोई कारण नहीं है विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों को अलग-अलग उपचार दिया जा रहा है वेतन निर्धारण का मामला-पंजाब और हरियाणा विनियम नहीं हैं । संविधान के अनुच्छेद 14 और 16(1) से प्रभावित – संवैधानिक 774 आई.एल.आर. पंजाब और हरियाणा 2010(1) के प्रावधान (i) की वैधता। पंजाब रेगुलेशन के 5(1) और हरियाणा रेगुलेशन के रेग6(2) को बरकरार रखा गया-याचिकाएं खारिज कर दी गईं।

अभिनिर्धारित किया गया कि अनुच्छेद 14 का समान संरक्षण खंड नहीं हो सकता इसका अर्थ यह लगाया गया कि परिस्थितियों में भिन्नता के बावजूद कानून के समान नियम सभी व्यक्तियों पर लागू होने चाहिए। पंजाब और हरियाणा विनियमों ने अध्यक्ष के सदस्यों के दो स्वतंत्र और पारस्परिक रूप से विशिष्ट वर्ग बनाए हैं जिन्हें अपने संबंधित राज्यों के लोक सेवा आयोग में काम करना है। जो लोग पेंशन अर्जित नहीं कर रहे हैं उनका वेतन उन लोगों की तुलना में अलग तरीके से तय किया जाना है जो सेवानिवृत्त हो गए हैं और पेंशनभोगी फिर से नियोजित हो गए हैं। दोनों वर्ग अलग-अलग हैं। पहली श्रेणी से संबंधित व्यक्तियों को उनके खाते में कोई सेवानिवृत्ति लाभ नहीं मिलता है और उन्हें पूरा भुगतान किया जाता है वेतन। वे उम्र में भी अपेक्षाकृत छोटे हैं. पुन:

नियोजित पेंशनभोगियों के खाते में सभी सेवानिवृत्ति लाभ होते हैं और सेवानिवृत्ति के बाद उन्हें नियोजित किया जाता है। वास्तव में ये नियम दोनों वर्गों के पारिश्रमिक को लगभग बराबर लाकर समानता बहाल करने का प्रयास करते हैं। (पैरा 27)

इसके अलावा, यह माना गया कि पंजाब विनियम और हरियाणा विनियम एक वैध वर्गीकरण पर विचार किया है और पुनर्नियुक्त पेंशनभोगी उन लोगों की तुलना में एक अलग वर्ग का गठन करते हैं जिन्होंने सेवानिवृत्ति प्राप्त नहीं की है। इसलिए, वेतन निर्धारण के मामले में विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों के साथ किए जा रहे अलग-अलग व्यवहार पर नाराज़ होने का कोई कारण नहीं है। इसलिए, सैद्धांतिक रूप से और उपलब्ध उदाहरणों के आधार पर, दोनों पंजाबऽऔर हरियाणा विनियम अनुच्छेद 14 और 16(1) से प्रभावित नहीं हैं संविधान। (पैरा 31)

आर.के. मलिक, वरिष्ठ अधिवक्ता, मनीष जैन,के साथ अधिवक्ता, (सीडब्ल्यूपी में) के साथ क्रमांक 13029 ऑफ 1997)

नीलोफर ए. परवीन, वकील, याचिकाकर्ता(ओं) में (2007 के सीडब्ल्यू पी नंबर 5684 में)

संजीव कौशिक, अतिरिक्त एजी, हरियाणा, उत्तरदाताओं के लिए (सीडब्ल्यू पी में)।

क्रमांक 13029 ऑफ़ 1997)

पीयूष कांत जैन, अतिरिक्त एजी, पंजाब प्रतिवादी संख्या 1 और 3 के लिए

(2007 के सीडब्ल्यू पी संख्या 5684)

<u>एम.एम. कुमार, न्यायमूर्ति</u> .

(1) यह आदेश 1997 के सीडब्ल्यूपी संख्या 13029 और 1997 के सीडब्ल्यूपी संख्या 5684 का निपटान करेगा। 2007 कानून और तथ्यों के सामान्य प्रश्न के रूप में शामिल हैं।

(2) याचिकाकर्ता श्री जीएल बत्रा ने हरियाणा लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में अपना वेतन निर्धारित करने वाले दिनांक 15.4.1997/6.5.1997 (पी -13) के आदेश को रद्द करने के लिए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है हरियाणा लोक सेवा आयोग (सेवा शर्तें) विनियम, 1972 के विनियम 6 के अधीन दिनांक 06.07.1994 से प्रभावी विनियम')। उनकी शिकायत यह

है कि उन्हें दिए जा रहे सेवानिवृत्ति लाभों में कटौती करके उनका मूल वेतन 7,500 रुपये प्रति माह से घटाकर 4,135 रुपये प्रति माह कर दिया गया है।

तथ्य पुन: 1997 का सी.डब्ल्यू.पी. नं. 13029 – हरियाणा मामला

3 याचिकाकर्ता लोकसभा सचिवालय में अतिरिक्त सचिव के रूप में काम कर रहे थे। और 13,250/- रुपये का वेतन प्राप्त कर रहे हैं। उस समय उनका मूल वेतन रु. 7,500/- प्रति माह। उन्हें दिनांक 6.7.1994 (पी -1) के आदेश के तहत हरियाणा लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया था। एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में उनकी सेवा शर्तें हरियाणा विनियमों द्वारा शासित थीं। विनियम 6(1) में कहा गया है कि अध्यक्ष को 7,000/- रुपये प्रतिमाह का पारिश्रमिक प्राप्त होगा, जिसे दिनांक 3.10.1996 की अधिसूचना द्वारा बढ़ाकर 7,500/- रुपये कर दिया गया।. इसके अलावा वह ऐसे अन्य भत्तों के भी हकदार थे जो समान वेतन प्राप्त करने वाले सरकारी कर्मचारी के लिए स्वीकार्य हो सकते हैं। फिर भी विनियम 6(2) में सरकारी सेवा से सेवानिवृत्ति के बाद अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति के पारिश्रमिक को निर्धारित किया गया है, ऐसी स्थिति में, पदधारी उसे स्वीकृत पेंशन के अतिरिक्त 7,500/- रुपये का हकदार होगा। विनियम 6 के उप-विनियमन (2) के पहले परंतुक में यह निर्धारित किया गया है कि पारिश्रमिक की राशि और पेंशन की सकल राशि या अन्य प्रकार के सेवानिवृत्ति लाभों के बराबर पेंशन उसके द्वारा उसकी सेवानिवृत्ति से पहले लिए गए अंतिम वेतन या उप-विनियमन (1) में उल्लिखित पारिश्रमिक जो भी अधिक हो, से अधिक नहीं होनी चाहिए। दूसरे परंतुक में यह भी प्रावधान है कि भत्तों को छोड़कर कुल पारिश्रमिक और पेंशन की सकल राशि और अन्य प्रकार के

सेवानिवृत्ति लाभों के बराबर पेंशन किसी भी मामले में 8,000 रुपये प्रति माह से अधिक नहीं होनी चाहिए। हरियाणा विनियम के विनियम 6 में यह भी प्रावधान है कि कोई सदस्य जो आयोग में अपनी नियुक्ति की तारीख को केंद्र या राज्य सरकार की सेवा में था, उसे आयोग के सदस्य के रूप में उसकी नियुक्ति की तारीख से ऐसी सेवा से सेवानिवृत्त माना जाएगा। हरियाणा विनियमों के विनियम 2(घ) के अनुसार सदस्य शब्द में आयोग के अध्यक्ष भी शामिल हैं।

(4) याचिकाकर्ता की चुनौती का मुख्य आधार यह है कि यदि वह अपने मूल विभाग यानी लोकसभा सचिवालय में अतिरिक्त सचिव के रूप में बने रहते, तो उन्हें 1.9.1994 से वेतन वृद्धि मिली होती और उनका मूल वेतन 7,600 रुपये प्रति माह होता। वह सबसे वरिष्ठ अतिरिक्त सचिव थे और उन्हें लोकसभा के महासचिव के रूप में पदोन्नत किए जाने की संभावना थी, जो कैबिनेट सचिव की स्थिति के बराबर का पद है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता द्वारा यह दावा किया गया है कि उनके द्वारा लिए गए अंतिम वेतन को एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में उनकी नियुक्ति पर संरक्षित करने की आवश्यकता थी। इस संबंध में उन्होंने राज्य सरकार के साथ-साथ एचपीएससी (पी -3 और पी 4) को एक अभ्यावेदन दिया। दिनांक 15/18.1996 को हरियाणा विनियम के विनियम 6 में निहित प्रावधानों में ढील देते हुए उनका वेतन 6.7.1994 से व्यक्तिगत उपाय के रूप में 7,500/- रूपये प्रतिमाह निर्धारित किया गया। उपरोक्त आदेश भत्ते की स्वीकार्यता की तारीख के बारे में चुप था। इसलिए, एचपीएससी ने 20.06.1996 को सरकार को एक संदर्भ भेजा जिसमें यह स्पष्टीकरण मांगा गया कि क्या भत्ते 1.1.1986 से अन्य राज्य सरकार के कर्मचारियों को दिए जाने थे या 1.1.1989 से जब मूल वेतन (पी -6) के अलावा 'भत्ते' को शामिल करने के लिए विनियमन 6 में संशोधन किया गया था। याचिकाकर्ता ने अलग से हरियाणा के मुख्य सचिव (पी-8) के माध्यम से सरकार के समक्ष प्रतिनिधित्व किया। उपर्युक्त अनुरोध को दिनांक 23-10-1996 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था और सरकार ने अपने पूर्व निर्णय (पी-9) को

दोहराया था। इसके बाद, विनियम 6 में छूट में याचिकाकर्ता के पारिश्रमिक को निर्धारित करने वाले दिनांक 18.3.1996 के आदेश को वापस ले लिया गया और उसे किए गए अतिरिक्त भुगतान को दिनांक 29.11.1996 (पी-10) के आदेश के तहत वसूल करने का आदेश दिया गया।

(5) 26.12.1996 को, याचिकाकर्ता ने फिर से हरियाणा के राज्यपाल (पी -11) का प्रतिनिधित्व किया और इसके बाद 3.2.1997 (पी -12) का एक और पत्र लिखा। हालांकि, दिनांक 15.4.1997/6.5.1997 के आदेश के तहत, याचिकाकर्ता का वेतन प्रति माह मूल वेतन (पी -13) के रूप में 4,135 रुपये पर फिर से तय किया गया था, जो तत्काल याचिका में चुनौती का विषय है।

(6) प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा दायर लिखित बयान में, तथ्यात्मक जैसा कि ऊपर देखा गया है, स्थिति दूषित नहीं हुई है। याचिकाकर्ता के वेतन के निर्धारण को उचित ठहराते हुए यह कहा गया है कि हरियाणा विनियमों के विनियमन 6 के प्रावधानों के अनुसार एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में नियुक्ति पर एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी का वेतन इस तरह से तय किया जाना चाहिए कि पेंशन की राशि और पेंशन की राशि को सेवानिवृत्ति लाभ केअन्य रूपों के बराबर शामिल करके, यह उनकी सेवानिवृत्ति से पहले उनके द्वारा लिए गए अंतिम वेतन या विनियम 6 (1) में प्रदान किए गए 7,500 रुपये से अधिक नहीं है, या जो भी अधिक हो और यदि उनकी सेवानिवृत्ति से पहले अंतिम वेतन स्वीकार्य है तो यह 8,000 रुपये प्रति माह की सीमा के अधीन था।

(7) दिनांक 20-1-1998 को जब रिट याचिका विचारार्थ आई, तो खंडपीठ ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:-

"याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान रिट याचिका के समान बिंदुओं वाली कुछ रिट याचिकाओं को स्वीकार कर लिया गया है और उन रिट याचिकाओं में, अंतरिम निर्देश दिए गए थे कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान उन याचिकाकर्ताओं को परिलब्धियां कैसे वितरित की जानी हैं। प्रतिवादियों की ओर से दायर जवाब के पैरा 18 में, यह निम्नानुसार कहा गया है:

"18. पैरा 18 के उत्तर में यह प्रस्तुत किया जाता है कि सिविल रिट याचिका संख्या 1355/91, 4029/87, 89 की 11839, 92 की 2898 और 1995 की 15159, जिसमें विनियम 6 के प्रावधानों की वैधता को चुनौती दी गई थी, को नियमित सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया गया है। जैसा कि पूर्वगामी पैरा में बताया गया है, याचिकाकर्ता के तर्क में कोई बल नहीं है। विनियमों के प्रावधान वैध और संवैधानिक हैं। हालांकि, यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा इस पैरा में उद्धृत दो सिविल रिट याचिकाओं में, माननीय उच्च न्यायालय ने परिलब्धियों में से पेंशन आदि की राशि में कटौती नहीं करने का निर्देश दिया था। 1995 के सीडब्ल्यूपी संख्या 15159 में, हालांकि, निर्देश पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने और यह वचन देने के अधीन था कि राशि 18% ब्याज के साथ वापस कर दी जाएगी।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम इस रिट याचिका को नियमित सुनवाई के लिए स्वीकार करते हैं और इसे 1995 के सीडब्ल्यूपी नंबर 15159 के साथ सुनने का आदेश देते हैं। एक अंतरिम उपाय के रूप में यह आदेश दिया जाता है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादी याचिकाकर्ता के वेतन से पेंशन और ग्रेच्युटी में कटौती नहीं करेंगे, बशर्ते कि याचिकाकर्ता पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करे और प्रतिवादियों को वचन दे कि यदि रिट याचिका खारिज कर दी जाती है, तो उक्त राशि 18% ब्याज के साथ वापस कर दी जाएगी।.इस तरह की प्रतिभूति/हलफनामा एक महीने के भीतर दाखिल किया जाए।

(8) दिनांक 4.3.1998 को खंडपीठ ने अंतरिम आदेश को निम्नलिखित सीमा तक संशोधित किया:-

पीठ ने कहा, 'दोनों पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद हम 20 जनवरी 1998 के अंतरिम आदेश को इस हद तक संशोधित करते हैं कि आदेश की अंतिम पंक्ति में जिसमें कहा गया था कि 'पर्याप्त सुरक्षा मुहैया कराने और यह वचन देने पर कि राशि 18 प्रतिशत ब्याज के साथ लौटा दी जाएगी' अब 'यह हलफनामा देने पर कि राशि वापस कर दी जाएगी' पढ़ा जाएगा."

(9) दिनांक 4.3.1998 के आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ता ने 10.3.1998 को अपना वचन प्रस्तुत किया। दिनांक 20.01.1998 के आदेश के अनुसार, तत्काल याचिका पर 1996 के सीडब्ल्यूपी संख्या 15159 (राम फल सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य) के साथ सुनवाई की जानी थी, जिसे 8.9.2004 को इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निपटा दिया गया था। तदनुसार, याचिकाकर्ता ने राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) में दिए गए फैसले के संदर्भ में रिट याचिका के निपटान के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के साथ धारा 151

सीपीसी के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें 2005 के सीएम नंबर 1000 शामिल थे। उपरोक्त आवेदन के जवाब में प्रतिवादी राज्य ने यह रुख अपनाया कि राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) और अन्य संबंधित याचिकाओं में दिए गए फैसले के खिलाफ, 2005 के एलपीए नंबर 110 से 116 वाली अपीलों को प्रतिवादी राज्य हरियाणा द्वारा प्राथमिकता दी गई थी और लेटर्स पेटेंट बेंच ने इसे स्वीकार कर लिया। हालांकि, ठहरने की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया था। उपरोक्त रुख को ध्यान में रखते हुए, 29.8.2005 के आदेश के तहत 2005 के सीएम नंबर 1000 का निपटारा करते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने आदेश दिया कि तत्काल याचिका को 2005 के एलपीए नंबर 110 से 116 के फैसले के बाद सूचीबद्ध किया जाए।

(10) 2007 के सीएम नंबर 7372 के साथ धारा 151 सीपीसी के तहत एक और आवेदन याचिकाकर्ता द्वारा दायर किया गया था, जिसमें कहा गया था कि 2005 के एलपीए नंबर 110 से 116, जो 1995 के सीडब्ल्यूपी नंबर 15159 (सुप्रा) में दिए गए 8.9.2004 के फैसले के खिलाफ दायर किए गए थे, को लेटर्स पेटेंट बेंच द्वारा 19.3.2007 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। लेटर्स पेटेंट बेंच ने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि 1995 (सुप्रा) के सीडब्ल्यूपी नंबर 15159 में विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले पर इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने **एमपी पांडोव बनाम भारत के मामले में भरोसा किया था।पंजाब राज्य और अन्य (2005 का सीडब्ल्यूपी संख्या 85, 26.02.2005 को फैसला सुनाया गया)** और उक्त आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई थी।

(11) 2007 के सीएम नंबर 7372 के जवाब के पैरा 3 में, प्रतिवादी नंबर 1 निम्नानुसार दावा किया गया है: –

> "3. पैरा 3 के जवाब में, यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह रिट याचिका माननीय एकल न्यायाधीश के फैसले द्वारा कवर की गई है, जिसे विशेष मामले के रूप में वेतन के निर्धारण के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा अपनी रिट याचिका में उठाए गए बिंदु को छोड़कर डिवीजन बेंच द्वारा भी बरकरार रखा गया है। हालांकि, 1996 के सीडब्ल्यूपी नंबर 15159- राम फल सिंह बनाम हरियाणा राज्य में, याचिकाकर्ता ने हरियाणा लोक सेवा आयोग (सेवा की शर्तें) विनियमन, 1972 के विनियमन 6 (2) के परंतुक पर सहमति व्यक्त की है। याचिकाकर्ता ने उस रिट याचिका में यह भी प्रार्थना की है कि ग्रेच्युटी के बराबर पेंशन और पेंशन में कटौती को याचिकाकर्ता के वेतन से नहीं काटा जाना चाहिए। इसलिए, यह कहा जाता है कि *रिट याचिका में शामिल विवाद पूरी तरह से कवर नहीं किया गया है जैसा कि याचिकाकर्ता द्वारा कहा गया है।*" (जोर जोड़ा गया)

12. दिनांक 4-5-2009 को एकल न्यायाधीश ने देखा कि याचिकाकर्ता ने इस रिट याचिका में कतिपय वैधानिक प्रावधानों को चुनौती दी है। तदनुसार, माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा उचित आदेश पारित किए जाने के बाद, यह मामला हमारे समक्ष रखा गया है।

तथ्य पुन: 2007 का सीडब्ल्यूपी नंबर 5684 - पंजाब मामला

13. याचिकाकर्ता ने इस याचिका में पंजाब राज्य लोक सेवा (सेवा शर्त) विनियम, 1958 के विनियम 5(1) के परंतुक (1) की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी है। उन्होंने दिनांक 7.9.2006 (पी-2) के आदेश को रद्द करने की भी मांग की है, जिसके तहत उनका मूल वेतन 27,600 रुपये प्रति माह के मूल वेतन के बजाय 12,425 रुपये प्रति माह तय किया गया है। उन्होंने प्रतिवादियों

को पंजाब लोक सेवा आयोग (संक्षिप्तता के लिए, 'पीपीएससी') के सदस्य के रूप में उनकी नियुक्ति की तारीख से उनका मूल वेतन 27,600 रुपये तय करने और ब्याज के साथ बकाया राशि का भुगतान करने का निर्देश देने की भी मांग की है।

14. याचिकाकर्ता श्री डी एस ग्रेवाल 31.12.2005 को सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर ब्रिगेडियर के रूप में भारतीय सेना से सेवानिवृत्त हुए थे। इसके बाद, उन्हें दिनांक 9-5-2006 की अधिसूचना द्वारा पीपीएससी के सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया था। पीपीएससी के सदस्य के रूप में याचिकाकर्ता की सेवा की शर्तें निम्नलिखित द्वारा शासित होती हैं: पंजाब विनियम। पंजाब के विनियम 5(1) परंतुक (i) में संलग्न विनियम पीपीएससी के अध्यक्ष या सदस्य की परिलब्धियों से संबंधित हैं.

15. 7.9.2006 को, प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा एक आदेश पारित किया गया था जिसमें याचिकाकर्ता का वेतन 12,425 रुपये (पी -2) तय किया गया था। याचिकाकर्ता ने दावा किया है कि उसका मूल वेतन 27,600 रुपये तय किया जाना चाहिए था। याचिकाकर्ता ने राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) में दिए गए एकल न्यायाधीश के फैसले, एमपी पांडोव के मामले (सुप्रा) में दिए गए डिवीजन बेंच के फैसले और माननीय सुप्रीम कोर्ट द्वारा विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज करने के आदेशों पर भरोसा करके तत्काल याचिका की अनुमति देने की प्रार्थना की है।

16. तथ्यात्मक स्थिति को स्वीकार करते समय, प्रतिवादी नंबर 1 और 3 द्वारा अपनाया गया रुख यह है कि याचिकाकर्ता का वेतन पंजाब विनियमों के विनियमन 5 के प्रावधानों के तहत सही तरीके से तय किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किए गए निर्णय तत्काल याचिका में लागू नहीं होते हैं क्योंकि प्रतिवादी पंजाब राज्य ने कभी भी कोई रियायत नहीं दी है, जैसा कि हरियाणा के मामलों में विद्वान राज्य वकील द्वारा दिया गया है। इस संबंध में **अपट्रॉन इंडिया लिमिटेड बनाम राज्य शम्मी भान, (1998) 6** एससीसी 538 और **केंद्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद बनाम डॉ के संथा कुमारी,**

(2001) 5 एससीसी 60 के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है ।

<u>प्रतिद्वंद्वी विवाद</u>:

17. श्री आर.के.मलिक, विद्वान वरिष्ठ वकील और सुश्री नीलोफर ए।याचिकाकर्ता (ओं) के विद्वान वकील परवीन ने तर्क दिया है कि विनियमन 6 (1) और 6 (2)हरियाणा विनियमों को पहले ही संविधान के अनुच्छेद 14, 16 (1) और 318 (2) के अधिकार क्षेत्र से बाहर घोषित किया जा चुका है। इस संबंध में उन्होंने **राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) में दिए गए इस न्यायालय के एकल पीठ के फैसले पर भरोसा किया है और** तर्क दिया है कि एक बार जब विभिन्न स्त्रोतों से आने वाले दो व्यक्तियों को एक ही पद पर काम करने के लिए रखा जाता है और उन्हें उन्हीं कार्यों का निर्वहन करना होता है जो परस्पर परिवर्तनीय होते हैं तो वेतन के मामले में कोई भेदभाव नहीं हो सकता है। वरिष्ठ वकील के अनुसार, याचिकाकर्ता वर्ष 1994 में लोकसभा के संयुक्त सचिव के रूप में काम कर रहे थे, जब उन्हें एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया था। श्री मलिक ने तर्क दिया कि हरियाणा विनियमों के नियम 6 के परंतुक में एक विसंगतिपूर्ण स्थिति पर विचार किया गया है, क्योंकि याचिकाकर्ता जैसा व्यक्ति 10 साल या उससे अधिक सेवा के साथ उसके द्वारा प्राप्त वेतन का अधिकतम हकदार होगा और वेतन अंतिम वेतन से अधिक नहीं होना चाहिए। यदि उपरोक्त सिद्धांत पर काम किया जाता है, तो याचिकाकर्ता आगे की शर्त के साथ 7,500 रुपये की राशि का हकदार होगा कि पेंशन का प्रतिनिधित्व करने वाले पेंशन या अन्य सेवानिवृत्ति लाभों में कटौती की जानी चाहिए।. उपर्युक्त की तुलना में, किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में, जिसने पूर्व कर्मचारी होने के नाते कोई पेंशन अर्जित नहीं की है और जिसे आयोग के अध्यक्ष / सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया है, तो उसे पूर्ण वेतन मिलता रहेगा जो बहुत अधिक होगा क्योंकि उसके मामले में कोई कटौती लागू नहीं होगी। अपने तर्क को स्पष्ट करते हुए श्री मलिक ने प्रस्तुत किया है कि एक वकील संपन्न अभ्यास के बाद पूर्ण वेतन अर्जित करेगा, जबकि एक पूर्व कर्मचारी को पेंशन राशि में कटौती करके वेतन से कटौती का सामना करना पड़ता है। इसलिए, उन्होंने कहा है कि समान ड्यूटी के लिए, याचिकाकर्ता को वेतन मिलेगा जो पेंशन की राशि से कम हो जाता है जबकि जो

व्यक्ति खुले मैदान से आया है, उसे पूरा वेतन मिलेगा। इसलिए, वेतन के मामले में शत्रुतापूर्ण भेदभाव है, हालांकि दोनों एक ही कार्यालय के लिए एक अलग स्रोत से हैं।

18. पंजाब मामले में विद्वान वकील सुश्री नीलोफर ए परवीन ने कहा है उपरोक्त तर्क को यह प्रस्तुत करके अपनाया गया कि पंजाब का विनियम 5 (i) कुल और सार में विनियम समान हैं।

19. पंजाब के अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री पीके जैन और हरियाणा के अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री संजीव कौशिक ने प्रस्तुत किया है कि पंजाब विनियमों के विनियमन 5 और हरियाणा विनियमों के विनियमन 6 क्रमशः किसी भी संवैधानिक अमान्यता से ग्रस्त नहीं हैं और इन्हें बरकरार रखा जाना चाहिए।. उन्होंने तर्क दिया है कि वेतन के मामलों में एक कर्मचारी जिसने अभी तक पेंशन अर्जित नहीं की है, कानूनी रूप से उस व्यक्ति की तुलना में अलग व्यवहार किया जा सकता है जिसने पेंशन अर्जित करना शुरू कर दिया है। उन्होंने कहा है कि कर्मचारियों के दो वर्गों के बीच अंतर स्पष्ट है क्योंकि पहले मामले में एक व्यक्ति कर्मचारी बना रहता है जबकि दूसरे मामले में वह पेंशन अर्जित करने वाला पूर्व-कर्मचारी बन जाता है। दोनों श्रेणियां दो अलग-अलग अलग-अलग वर्गों का गठन करती हैं और गैर-बराबर को समान रूप से व्यवहार नहीं किया जा सकता है। दोनों विद्वान राज्य वकीलों ने **राम फल सिंह के मामले (सुप्रा)** में एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को चुनौती दी है और तर्क दिया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने गैर-समान लोगों के साथ समान व्यवहार करके कानून की गंभीर त्रुटि की है। विभिन्न स्रोतों से आने वाले व्यक्तियों द्वारा एक कैडर बनाने और फिर समान वेतन के हकदार बनने का सिद्धांत तत्काल याचिकाओं के तथ्यों पर पूरी तरह से लागू नहीं होता है क्योंकि पंजाब विनियम और हरियाणा विनियम दोनों एक तर्कसंगत वर्गीकरण करते हैं। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया है

कि राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) **में विद्वान एकल न्यायाधीश की निर्भरता** माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर **है। <u>सीमा शुल्क कलेक्टर, बॉम्बे,</u> 1967 एस.एल.आर. <u>रोशन टंडन</u> वी। <u>भारत संघ</u>, 1967 एस.एल.आर. <u>एस.एम. पंडित</u> वी. <u>गुजरात राज्य,</u> 1972, एस.एल.आर.** और **<u>रामचंद्र शंकर देवधर</u> वी। <u>महाराष्ट्र राज्य,</u> 1974 (1) एसएलआर 470** पूर्णत गलत है क्योंकि उन मामलों में कानून का ऐसा कोई सिद्धांत निर्धारित नहीं किया गया है, जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि पेंशन के साथ सेवानिवृत्त व्यक्ति पेंशन में कटौती किए बिना उसी वेतनमान का हकदार होगा, जो एक नियमित कर्मचारी को दिया जाता है जो अभी सेवानिवृत्त नहीं हुआ है।

20. इन याचिकाओं में उठाया गया विवाद किस पर निर्भर है? पंजाब विनियमों के विनियम 5 और हरियाणा विनियम के विनियम 6 की व्याख्या। दोनों विनियमों को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

<u>पंजाब विनियम का विनियम 5</u>

"5(1) "अध्यक्ष को 22,400 रुपये के वेतनमान में वेतन मिलेगा- 525-24,500 और अन्य सदस्य 18,400-500-22,400 रुपये के वेतनमान में हैं और इसके अलावा वे ऐसे अन्य भत्ते प्राप्त करने के भी हकदार होंगे जो समान वेतन प्राप्त करने वाले सरकारी कर्मचारियों को समय-समय पर स्वीकार्य हो सकते हैं।"बशर्ते कि: -

(i) यदि नियुक्ति के समय अध्यक्ष या सदस्य कोई ऐसा व्यक्ति है जो केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय प्राधिकरण, विश्वविद्यालय, निजी रूप से प्रबंधित मान्यता प्राप्त विद्यालय या संबद्ध महाविद्यालय या पंजाब सरकार के पूर्ण स्वामित्व या नियंत्रण वाले किसी अन्य निकाय के अधीन सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका है, और जो पेंशन, ग्रेच्युटी, अंशदायी भविष्य निधि या अन्यथा के माध्यम से प्राप्त कर रहा है या प्राप्त कर चुका है या सेवानिवृत्ति लाभ प्राप्त करने का हकदार बन गया है, इस विनियमन में निर्दिष्ट वेतन किसी

भी प्रकार की पेंशन की सकल राशि से कम हो जाएगा, जिसमें पेंशन का कोई भी हिस्सा शामिल है जिसे कम्यूट किया जा सकता है।
बशर्ते कि वेतन तय करने के लिए पेंशन की राशि प्रति माह पांच सौ रुपये से अधिक नहीं मानी जाएगी।

हरियाणा विनियम का विनियम 6

6 (1) अध्यक्ष को सात हजार रुपये प्रति माह का पारिश्रमिक मिलेगा। वे ऐसे अन्य भत्तों के भी हकदार होंगे जो भविष्य में समय-समय पर स्वीकार्य हों, सरकारी कर्मचारियों को कार भत्ते के रूप में चार सौ रुपये प्रति माह के अतिरिक्त समान वेतन प्राप्त करें, बशर्ते कि एक कार का रखरखाव किया जाए।

2. अध्ययक्ष या सदस्य, यदि, उसकी नियुक्ति के समय, एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी है, तो वह उसे स्वीकृत पेंशन के अलावा उप विनियमन (1) में उल्लिखित पारिश्रमिक का हकदार होगा। बशर्ते कि पारिश्रमिक की राशि और पेंशन की सकल राशि या सेवानिवृत्ति लाभ के अन्य रूपों के बराबर पेंशन उसकी सेवानिवृत्ति से पहले उसके द्वारा अंतिम रूप से लिए गए वेतन या उप-विनियमन (1) में उल्लिखित पारिश्रमिक से अधिक न हो:

बशर्ते कि कुल पारिश्रमिक और पेंशन का सकल और भत्तों को छोड़कर सेवानिवृत्ति लाभ के अन्य रूपों के बराबर पेंशन किसी भी मामले में प्रति माह आठ हजार रुपये से अधिक नहीं होगी।

3. अध्यक्ष या सदस्य, जो अपनी नियुक्ति के समय केन्द्र या राज्य सरकार की सेवा में है और विनियम 9 के उप-विनियमन (1) के अधीन विकल्प का प्रयोग नहीं करता है, उसे अध्यक्ष या सदस्य के रूप में उसकी नियुक्ति से ठीक पहले, जैसा भी मामला हो या उप-विनियमों

(1) में उल्लिखित पारिश्रमिक, जो भी अधिक हो, उसके द्वारा लिए गए पारिश्रमिक का भुगतान किया जाएगा। सामान्य प्रक्रिया में सरकारी सेवा से उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख तक और उसके बाद उसके पारिश्रमिक को उप विनियमन (2) में किए गए प्रावधान के अनुसार विनियमित किया जाएगा।

4. एक सदस्य जो सभापति की अनुपस्थिति में अवकाश या अन्यथा, यदि अध्यक्ष के अतिरिक्त कर्तव्यों का पालन करने के लिए कहा जाता है, तो वह दो सौ रुपये प्रति माह की दर से अतिरिक्त पारिश्रमिक का हकदार होगा: बशर्ते कि इस तरह के अतिरिक्त कर्तव्यों को कम से कम चौदह दिनों की अवधि के लिए किया जाए।

21. पंजाब विनियमों के विनियम 5 के अवलोकन से पता चलता है कि पीपीएससी के अध्यक्ष को 22,400-525-24,500 रुपये के वेतनमान में वेतन प्राप्त होगा। पीपीएससी के सदस्य को 18,400-500-22,400 रुपये के वेतनमान में वेतन मिलना है। वे ऐसे अन्य भत्ते प्राप्त करने के भी हकदार हैं जो सरकारी कर्मचारियों को अतिरिक्त समान वेतनमान प्राप्त करने के लिए स्वीकार्य हो सकते हैं। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि यह पीपीएससी के अध्यक्ष और सदस्यों को दिया जाने वाला वेतनमान है, यदि उन पदों के पदधारियों को कोई सेवानिवृत्ति लाभ नहीं मिलता है।

22. विनियम 5(1) के तहत प्रावधान में स्पष्ट किया गया है कि यदि नियुक्ति के समय अध्यक्ष या सदस्य केंद्र सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय प्राधिकरण, विश्वविद्यालय, निजी तौर पर प्रबंधित मान्यता प्राप्त स्कूल या संबद्ध कॉलेज या पंजाब सरकार के पूर्ण स्वामित्व या नियंत्रण वाले किसी अन्य निकाय की सेवा से सेवानिवृत्त हुआ है और जो पंजाब सरकार द्वारा पूर्ण या पर्याप्त रूप से स्वामित्व या नियंत्रण में है या प्राप्त हो गया है या बन गया है। पेंशन, ग्रेच्युटी, अंशदायी भविष्य निधि या अन्यथा के माध्यम से सेवानिवृत्ति लाभ प्राप्त करने के हकदार, तो विनियमन 5 (1) में निर्दिष्ट वेतन को पेंशन के किसी भी हिस्से सहित किसी भी प्रकार की पेंशन की सकल राशि से कम किया जाना चाहिए। यह एक अन्य परंतुक के साथ आगे योग्य है कि वेतन तय करने के लिए

प्रति माह 500 रुपये से अधिक पेंशन की राशि को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, एक पुनर्नियोजित पेंशनभोगी या पीपीएससी के अध्यक्ष या सदस्य के रूप में नियुक्त किए गए व्यक्ति के वेतन को किसी भी प्रकार की पेंशन की सकल राशि से कम किया जाना है, जिसे वह सेवा की मुद्रा के दौरान प्राप्त कर रहा था या प्राप्त करने का हकदार बन गया था। पेंशन की अधिकतम राशि, जिसे पीपीएससी के अध्यक्ष या सदस्य के वेतन में शामिल करने की अनुमति है, 500 रुपये है। इसलिए, यदि पीपीएससी का कोई सदस्य पुन: नियोजित पेंशनभोगी है और पेंशन के रूप में 15,000 रुपये प्राप्त कर रहा है, तो 18400-500-22400 रुपये के वेतनमान में निर्धारित उसका वेतन 15,000 रुपये की कटौती के बाद तैयार किया जाएगा, जो पेंशन की सकल राशि है जिसमें 500 रुपये शामिल हैं। यह विनियम स्पष्ट रूप से पुनर्नियोजित पेंशनभोगी के बीच अंतर करता है जो सेवानिवृत्ति लाभ प्राप्त कर रहे हैं और अन्य सदस्य /अध्यक्ष जिनके क्रेडिट में इस तरह का कोई लाभ नहीं है।

23. सामग्री और सार में हरियाणा विनियम पंजाब विनियमों के समान हैं, हालांकि विवरण में थोड़ा भिन्न हैं। विवाद हरियाणा विनियमों के विनियम 6 के उप-विनियमन (2) के तहत दो परंतुकों की व्याख्या के आसपास घूमता है. विनियम 6 के उप-विनियम (1) के अनुसार, एचपीएससी के अध्यक्ष प्रति माह 7,000 रुपये के पारिश्रमिक के हकदार हैं। वह ऐसे अन्य भत्तों का भी हकदार है जो समान वेतन प्राप्त करने वाले सरकारी कर्मचारियों को समय-समय पर स्वीकार्य हो सकते हैं। यदि अध्यक्ष एक कार रखता है तो उसे कार भत्ते के रूप में प्रति माह 400 रुपये भी देय हैं। उप-विनियम (2) में यह परिकल्पना की गई है कि यदि अध्यक्ष या सदस्य एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी है तो वह उसे स्वीकृत पेंशन के अतिरिक्त उप-विनियमन (1) में निर्धारित पारिश्रमिक का हकदार होगा। हालांकि, पहला

परंतुक यह स्पष्ट करता है कि पेंशन की राशि और सेवानिवृत्ति लाभ के अन्य रूपों को जोड़ने के बाद पारिश्रमिक की राशि उसकी सेवानिवृत्ति से पहले उसके द्वारा अंतिम रूप से लिए गए वेतन से अधिक नहीं है। इसमें यह भी प्रावधान है कि यह विनियम 6 के उप-विनियमन (1) द्वारा प्रतिपादित पारिश्रमिक से अधिक नहीं होना चाहिए। ऐसा सदस्य या अध्यक्ष या तो उसकी सेवानिवृत्ति से पहले उसके द्वारा लिया गया अंतिम वेतन या विनियम 6 के उप-विनियमन (1) में उल्लिखित वेतन, जो भी अधिक हो, के निर्धारण का हकदार है। दूसरे परंतुक में अधिकतम सीमा निर्धारित करते हुए कहा गया है कि किसी भी स्थिति में पारिश्रमिक 8,000/- रुपये प्रति माह से अधिक नहीं होगा, जिसे विनियम 6 के उप-विनियमन (3) द्वारा और स्पष्ट किया गया है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि हरियाणा विनियमों के विनियम 6 द्वारा तैयार मूल अंतर एम सदस्य/अध्यक्ष के बीच है जो पुन: नियोजित पेंशनभोगी हैं जैसा कि विनियमन 6 (2) और (3) से स्पष्ट है और जो कोई सेवानिवृत्त/पेंशन लाभ प्राप्त नहीं कर रहे हैं जैसा कि हरियाणा विनियमों के विनियम 6 (1) से स्पष्ट है।

24. पंजाब विनियमों और हरियाणा विनियमों दोनों की बारीकी से जांच करने से पता चलेगा कि पुन: नियोजित पेंशनभोगियों और गैर-पेंशनभोगियों के संबंध में वेतन निर्धारण के विभिन्न सिद्धांतों को शामिल किया गया है। संकल्पनात्मक और न्यायिक रूप से संविधियों, नियमों और सांविधिक विनियमों द्वारा प्रदत्त सीमाओं के अध्यधीन व्यक्तियों के दो अलग-अलग वर्गों के संबंध में वेतन निर्धारण के विभिन्न सिद्धांतों को अपनाने में कोई कठिनाई नहीं है क्योंकि पेंशनभोगियों और गैर-पेंशनभोगियों का वर्गीकरण दो अलग-अलग समूहों में पश्चिम बंगाल राज्य के मामले में निर्धारित दोहरे परीक्षण को पूरा करता है। **<u>अनवर अली सरकार</u>, एआईआर 1952 एससी 75**. वे दो स्थितियाँ हैं – (क) वर्गीकरण को एक समझदार भिन्नता पर स्थापित किया जाना चाहिए जो उन लोगों को अलग करता है जो दूसरों से एक साथ समूहीकृत हैं; और (ख) कि विभिन्नता का उस उद्देश्य से तर्कपूर्ण संबंध होना चाहिए जिसे क़ानून द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए। यह स्पष्ट किया गया है कि वर्गीकरण का आधार और अधिनियम का उद्देश्य जो अंतर है, अलग-अलग चीजें हैं और जो आवश्यक है वह यह है कि उनके बीच एक सांठगांठ होनी चाहिए। यह भी सर्वविदित है कि एक अधिनियमन की संवैधानिकता के पक्ष में अनुमान है क्योंकि एक विधायिका को अपने

स्वयं के लोगों की जरूरतों को समझने और सराहना करने के लिए माना जाता है और इसके कानूनों को अनुभव द्वारा प्रकट होने वाली समस्याओं के लिए निर्देशित माना जाता है। इसके भेदभाव को पर्याप्त आधार पर माना जाता है जब तक कि निश्चित रूप से अन्यथा नहीं दिखाया जाता है। वर्गीकरण को वैज्ञानिक रूप से परिपूर्ण या तार्किक रूप से पूर्ण होने की आवश्यकता नहीं है जब तक कि वर्गीकरण जुड़वां परीक्षण को संतुष्ट करने वाले किसी भी कारक पर आधारित हो।

25. विशेष न्यायालय विधेयक 1978, **(1979) 1 एससीसी 380** में 7 न्यायाधीशों की संविधान पीठ में संवैधानिक पीठों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों सहित बड़ी संख्या में निर्णयों का विश्लेषण करने का अवसर लिया। 7-न्यायाधीशों की संविधान पीठ द्वारा दिए गए आधिकारिक फैसले ने कानून के निम्नलिखित प्रस्तावों को निकाला है, जो इस प्रकार है: –

"(1) xxx xxx xxx

(2) xxx xxx xxx

(3) राज्य को अपने कानूनों की समान सुरक्षा प्रदान करने का संवैधानिक आदेश एक लक्ष्य निर्धारित करता है जो एक सटीक सूत्र के आविष्कार और अनुप्रयोग से प्राप्य नहीं है। इसलिए, वर्गीकरण को सटीक या वैज्ञानिक बहिष्करण या व्यक्तियों या चीजों को शामिल करके गठित करने की आवश्यकता नहीं है। अदालतों को किसी भी मामले में वर्गीकरण की वैधता निर्धारित करने के लिए भ्रामक सटीकता पर जोर नहीं देना चाहिए या डॉक्ट्रिनेयर परीक्षण लागू नहीं करना चाहिए। वर्गीकरण उचित है यदि यह स्पष्ट रूप से मनमाना नहीं है।.

(4) अनुच्छेद 14 की गारंटी में अंतर्निहित सिद्धांत यह नहीं है कि कानून के समान नियम भारतीय क्षेत्र के भीतर सभी व्यक्तियों पर लागू होने चाहिए या परिस्थितियों के मतभेदों के बावजूद उन्हें समान उपाय उपलब्ध कराए जाने चाहिए। इसका अर्थ केवल यह है कि समान रूप से परिस्थितिवशित सभी व्यक्तियों को प्रदान किए गए विशेषाधिकारों और देनदारियों दोनों में

समान रूप से व्यवहार किया जाएगा। समान कानून एक ही स्थिति में सभी पर लागू किए जाने चाहिए, और एक व्यक्ति और दूसरे के बीच कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए यदि कानून की विषय-वस्तु के संबंध में उनकी स्थिति काफी समान है।

(5) वर्गीकरण की प्रक्रिया द्वारा, राज्य के पास यह निर्धारित करने की शक्ति है कि कानून के प्रयोजनों के लिए और किसी विशेष विषय पर अधिनियमित कानून के संबंध में किसे एक वर्ग के रूप में माना जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह शक्ति कुछ हद तक कुछ असमानता पैदा करने की संभावना है; लेकिन अगर कोई कानून कई अच्छी तरह से परिभाषित वर्गों की स्वतंत्रता से संबंधित है, तो यह इस आधार पर समान सुरक्षा से इनकार करने के आरोप के लिए खुला नहीं है कि इसका अन्य व्यक्तियों पर कोई आवेदन नहीं है। इस प्रकार वर्गीकरण का अर्थ उन वर्गों में अलगाव है जिनका एक व्यवस्थित संबंध है, जो आमतौर पर सामान्य गुणों और विशेषताओं में पाया जाता है। यह एक तर्कसंगत आधार को मानता है और इसका मतलब यह नहीं है कि कुछ व्यक्तियों और वर्गों को मनमाने ढंग से एक साथ लाया जाए।

6.xxx xxx xxx

7. वर्गीकरण मनमाना नहीं होना चाहिए, बल्कि तर्कसंगत होना चाहिए, अर्थात्, यह न केवल कुछ गुणों या विशेषताओं पर आधारित होना चाहिए जो एक साथ समूहीकृत सभी व्यक्तियों में पाए जाने हैं और दूसरों में नहीं जो छूट गए हैं, लेकिन उन गुणों या विशेषताओं का

कानून के उद्देश्य से उचित संबंध होना चाहिए। परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए, दो शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए, अर्थात्, (1) वर्गीकरण को एक समझदार भिन्नता पर स्थापित किया जाना चाहिए जो उन लोगों को अलग करता है जो दूसरों से एक साथ समूहीकृत हैं और (2) कि उस भिन्नता का अधिनियम द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु के साथ तर्कसंगत संबंध होना चाहिए।

8. वर्गीकरण का आधार और अधिनियम का उद्देश्य जो भिन्नता है, वह अलग-अलग चीजें हैं और जो आवश्यक है वह यह है कि उनके बीच एक सांठगांठ होनी चाहिए। संक्षेप में, जबकि अनुच्छेद 14 प्रदान किए जाने वाले विशेषाधिकारों या लगाए जाने वाले प्रस्तावित देनदारियों के संबंध में समान रूप से स्थित अन्य व्यक्तियों की एक बड़ी संख्या में से मनमाने ढंग से चुने गए व्यक्तियों को विशेषाधिकार प्रदान करके या देनदारियों को लागू करके वर्ग भेदभाव को रोकता है, यह कानून के उद्देश्य के लिए वर्गीकरण को मना नहीं करता है, बशर्ते कि ऐसा वर्गीकरण उपरोक्त अर्थ ोे में मनमाना न हो।

9.xxx xxx xxx

10.xxx xxx xxx

11. वर्गीकरण का अर्थ आवश्यक रूप से वर्गीकृत व्यक्तियों और उन लोगों के बीच अंतर या भेदभाव करना है जो उस वर्ग के सदस्य नहीं हैं। यह एक वर्गीकरण का सार है कि वर्ग पर आम जनता पर आराम करने वालों से अलग कर्तव्य और बोझ होते हैं। वास्तव में, वर्गीकरण का विचार ही असमानता का है, ताकि यह कहे बिना चला जाए कि असमानता का केवल तथ्य किसी भी तरह से संवैधानिकता के मामले को निर्धारित नहीं करता है।.

12.xxx xxx xxx

13.xxx xxx xxx"

26. लॉर्डशिप द्वारा निकाले गए उपरोक्त प्रस्तावों की बारीकी से जांच करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुच्छेद 14 के समान संरक्षण खंड का अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता है कि परिस्थितियों के अंतर के बावजूद कानून के समान नियम सभी व्यक्तियों पर लागू होने चाहिए। लॉर्डशिप द्वारा निर्धारित प्रस्ताव संख्या 4 के अनुसार, इसका मतलब केवल यह है कि समान परिस्थितियों वाले सभी व्यक्तियों को प्रदान किए गए विशेषाधिकारों और देनदारियों दोनों में समान रूप से व्यवहार किया जाएगा। प्रचलित परिदृश्य में एक वकील के लिए चुनौती यह पता लगाना है कि क्या वर्गीकरण एक समझदार भिन्नता पर आधारित है जो उन लोगों को अलग करता है जो दूसरों से एक साथ खड़े होते हैं। उपर्युक्त शर्त हाथ में लिए गए मामलों में संतुष्ट है क्योंकि वर्गीकरण एक समझदार भिन्नता पर स्थापित है और वेतन के निर्धारण के प्रयोजनों के लिए दो समूहों को अलग करता है, अर्थात्, पुनः नियोजित पेंशनभोगी और अन्य। समझदार भिन्नता का पंजाब विनियमों और हरियाणा विनियमों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से भी एक तर्कात्मक संबंध है क्योंकि एक पुनर्नियोजित पेंशनभोगी को लोक सेवा आयोग के सदस्य या अध्यक्ष के कार्यालय से जुड़े पूर्ण वेतन की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप सेवानिवृत्ति के बाद एक

सेवानिवृत्त कर्मचारी को उसकी सेवानिवृत्ति से पहले की तुलना में बहुत अधिक वेतन मिलेगा।. तदनुसार, यहां तक कि दूसरा परीक्षण भी संतुष्ट है। इन मामलों में न केवल पेंशन अर्जित करने के आधार पर वर्गीकरण की स्थापना की जाती है, बल्कि विनियमों के उद्देश्य के साथ एक तर्कसंगत संबंध भी होता है जो पुन: नियोजित पेंशनभोगियों को 500 रुपये की अतिरिक्त राशि की अनुमति देकर दोनों समूहों के वेतन को बराबर लाने का प्रयास करता है। इसलिए, हम पाते हैं कि पंजाब विनियम और हरियाणा विनियम संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 (1) की आवश्यकता के पूर्ण अनुरूप हैं।.

27. उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि पंजाब और हरियाणा विनियमों ने सदस्यों या अध्यक्षों के दो स्वतंत्र और पारस्परिक रूप से अनन्य वर्गों का निर्माण किया है जिन्हें अपने संबंधित राज्यों के लोक सेवा आयोग में काम करना है। जो लोग पेंशन नहीं कमा रहे हैं, उनका वेतन उन लोगों की तुलना में अलग तरीके से तय किया जाना है जो सेवानिवृत्त हो चुके हैं और जिन्हें फिर से नियुक्त किया गया है। दोनों वर्ग अलग-अलग हैं। प्रथम श्रेणी से संबंधित व्यक्तियों को उनके क्रेडिट पर कोई सेवानिवृत्ति लाभ नहीं है और उन्हें पूर्ण वेतन का भुगतान किया जाता है। वे उम्र में भी अपेक्षाकृत छोटे हैं। पुन: नियोजित पेंशनभोगियों के पास उनके क्रेडिट के लिए सभी सेवानिवृत्ति लाभ होते हैं और सेवानिवृत्ति के बाद नियोजित होते हैं। विनियम वास्तव में दोनों वर्गों के पारिश्रमिक को लगभग बराबर लाकर समानता बहाल करना चाहते हैं।

28 उपर्युक्त संवैधानिक और कानूनी स्थिति के अलावा, हमारा यह भी विचार है कि यह एक पुरानी अवधारणा है कि पुन: नियोजित पेंशनभोगियों को वेतन निर्धारण के मामलों में

हमेशा उन लोगों की तुलना में अलग तरीके से व्यवहार किया जाता है जिन्हें अभी तक पेंशन प्राप्त नहीं हुई है। पंजाब और हरियाणा दोनों विनियमों ने पारिश्रमिक का भुगतान करने का एक सामान्य सिद्धांत निर्धारित किया। लेकिन विशेष प्रावधान किए गए हैं जिसमें स्पष्ट किया गया है कि यदि लोक सेवा आयोग का कोई अध्यक्ष या सदस्य पेंशन अर्जित करना शुरू करता है या पेंशनभोगी के रूप में फिर से नियोजित किया जाता है तो वेतन पंजाब विनियमों के मामले में विनियमन 5 के प्रावधानों और हरियाणा विनियमों के मामले में विनियमन 6 के अनुसार तय किया जाना चाहिए। वास्तव में, पंजाब सिविल सेवा नियम, खंड-2 (संक्षिप्तता के लिए, 'नियम') में पुन: नियोजित पेंशनभोगियों के वेतन के निर्धारण की विधि के लिए एक पूरा अध्याय समर्पित किया गया है। उन नियमों के अध्याय 7 में उपर्युक्त स्थिति को स्पष्ट किया गया है। मुद्दा अब एकीकृत नहीं है। इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **एमएस चावला बनाम पंजाब राज्य(2001) 5 एससीसी 358** के मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है, जहां पुनर्नियोजित पेंशनभोगियों के वेतन निर्धारण के व्यापक सिद्धांतों पर विचार किया गया है। उस मामले में वेतन को उसी तरह का वेतन तय करने के आदेश को चुनौती दी गई थी और पूर्वोक्त आदेश को बरकरार रखा गया था, जिसने जिला उपभोक्ता फोरम के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने पर एक पूर्व जिला न्यायाधीश को भुगतान किए जाने वाले पारिश्रमिक से पेंशन की सकल राशि में कटौती की है। नियमों के नियम 7.18 और नोट 3 (ए) का विस्तृत संदर्भ देते हुए सुप्रीम कोर्ट के उनके लॉर्डशिप ने निम्नानुसार कहा: "उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत जिला उपभोक्ता फोरम के अध्यक्ष के रूप में अपनी सेवानिवृत्ति के बाद जिला न्यायाधीश की नियुक्ति को पेंशनभोगी के पुन: रोजगार का मामला नहीं माना जा सकता है क्योंकि उक्त जिला न्यायाधीश सेवाओं के लिए पेंशन प्राप्त कर रहा है। पंजाब सिविल सेवा नियम, खंड II में निहित प्रावधानों के अनुसार जिला न्यायाधीश के रूप में प्रदान किया गया। चूंकि खंड II के अध्याय II की धारा 2.1 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रत्येक पेंशन को अध्याय VII में निहित शर्तों के अधीन

माना जाएगा और अध्याय VII में नियम 7.18 के साथ-साथ नोट 3 (a) (i) भी शामिल है, जो पहले निकाले जा चुके हैं, इसलिए निष्कर्ष अनूठा है कि उचित प्राधिकारी को वेतन और भत्ते तय करने होंगे, जिसे सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के तहत ऐसे वेतन के निर्धारण के बावजूद जिला फोरम के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने पर प्राप्त करने का हकदार है और इसे तय करते समय, नोट 3 (ए) (आई) में उल्लिखित सिद्धांत का पालन करना होगा। इस स्थिति को देखते हुए हमें 25 जनवरी, 1996 के सरकारी आदेश में कोई खामी नजर नहीं आती और उक्त अधिसूचना के तहत जिला उपभोक्ता फोरम के अध्यक्ष के रूप में पुन नियोजित जिला न्यायाधीशों का वेतन उस पेंशन को ध्यान में रखते हुए सही ही निर्धारित किया गया है, जो उन्हें सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीशों के रूप में प्राप्त हो रही है। श्री राव का यह तर्क कि अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत निर्धारित वेतन को प्रशासनिक आदेश द्वारा बदला जा रहा है, ऊपर उल्लिखित कानूनी प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए कोई बल नहीं है और वास्तव में यह पंजाब सिविल सेवा नियमों का प्रावधान है, जो पुन: नियोजित पेंशनभोगियों के वेतन से संबंधित है। जो क्षेत्र को नियंत्रित करता है। डी. एस. नकारा [एआईआर 1983 एससी 130] मामले में इस न्यायालय के निर्णय के आधार पर अन्य तर्क कि पेंशन एक इनाम नहीं है, का भी कोई मतलब नहीं है। ....." (जोर जोड़ा गया)

29. इसी प्रकार, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा वीएस मल्लीमठ **बनाम भारत संघ, (2001) 4 एससीसी 31 के मामले में दिया गया एक अन्य निर्णय** भी इसी तरह के प्रश्न से संबंधित है। उस मामले में उच्च न्यायालय के पुन नियोजित सेवानिवृत्त न्यायाधीश के वेतन निर्धारण का प्रश्न उठाया गया था। वेतन से पेंशन काटने के आदेश को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के सदस्य ने चुनौती दी थी। केंद्रीय सिविल सेवा (पुन: नियोजित पेंशनभोगियों के

वेतन का निर्धारण) आदेश, 1986 के नियम 14 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी और इसे बरकरार रखा गया था। उनके लॉर्डशिप द्वारा की गई टिप्पणियां निम्नानुसार हैं: –

> "4. इस प्रश्न पर आते हुए कि क्या मानवाधिकार आयोग का कोई सदस्य आयोग में अपनी सेवा की अवधि के लिए उपदान का हकदार है, ऐसा प्रतीत होता है कि नियमों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है, जो किसी सदस्य को उपदान का दावा करने का अधिकार देता हो। तथापि, उनके नियम 10 में यह विनिदष्ट है कि अध्यक्ष और सदस्यों की सेवा की शर्तें, जिनके लिए नियमों में कोई स्पष्ट उपबंध नहीं किया गया है, भारतीय प्रशासनिक सेवा से संबंधित भारत सरकार के सचिव पर लागू नियमों और आदेशों द्वारा निर्धारित की जाएंगी। जहां तक भारतीय प्रशासनिक सेवा से संबंधित भारत सरकार के सचिव की सेवा शर्तों का संबंध है, यह अखिल भारतीय सेवा अधिनियम, 1951 की धारा 3(1) के तहत बनाए गए नियमों के एक सेट द्वारा शासित होती है जिसे अखिल भारतीय सेवा (मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ) नियम, 1958 कहा जाता है। उपर्युक्त नियमों के तहत, सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी सेवा के एक सदस्य को दी जाती है, जो नियम 16 के तहत सेवानिवृत्त होता है या सेवानिवृत्त होने की आवश्यकता होती है, जैसा कि नियमों के नियम 17 में प्रावधान है। ग्रेच्युटी की राशि की गणना नियम 18 के तहत की जाती है। <u>नियम 16, 17 और 18 में निहित सक्षम प्रावधानों में पुन: नियोजित व्यक्ति के लिए ग्रेच्युटी के भुगतान का प्रावधान नहीं है। तथापि, भारत के राष्ट्रपति ने पुन: नियोजित पेंशनभोगियों के वेतन निर्धारण के संबंध में पूर्व के सभी आदेशों की अनदेखी करते हुए केन्द्रीय सिविल सेवा (पुन नियोजित पेंशनभोगियों के वेतन का निर्धारण)1986</u>

नामक एक आदेश जारी किया। उपर्युक्त आदेश उन सभी व्यक्तियों पर लागू होता है जो पेंशन, ग्रेच्युटी और/या अंशदायी भविष्य निधि लाभ प्राप्त करने पर सेवानिवृत्ति के बाद सिविल सेवाओं और केंद्र सरकार के मामलों के संबंध में पदों पर पुन: नियोजित होते हैं, उपर्युक्त आदेशों के नियम 14 में कहा गया है कि पुन: नियोजित अधिकारी किसी भी ग्रेच्युटी / मृत्यु / सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी के लिए पात्र नहीं होंगे,केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के नियम 18 और 19 में शामिल मामलों को छोड़कर पुनर्नियोजन की अवधि के लिए। याचिकाकर्ता का मामला केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के उपरोक्त प्रावधानों के तहत नहीं आता है। इसलिए, विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या याचिकाकर्ता की मानवाधिकार आयोग के सदस्य के रूप में नियुक्ति पुन: रोजगार के समान होगी। 'पुन: रोजगार' शब्द की किसी भी परिभाषा के अभाव में और आम बोलचाल के सिद्धांत को लागू करते हुए, यह निष्कर्ष अनूठा है कि उक्त नियुक्ति 'पुनर्नियोजन' के समान होगी और इसलिए, मानवाधिकार आयोग के सदस्य के रूप में सेवा की ऐसी अवधि के लिए, कोई ग्रेच्युटी देय नहीं होगी। (जोर जोड़ा गया)

30. पूर्व सैनिक संघों के परिसंघ **बनाम भारत संघ, (2006) 8 एससीसी 399 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ के समक्ष पुन नियोजित पेंशनभोगियों और सेवारत कर्मचारियों और उनके साथ अलग-अलग व्यवहार करने का प्रश्न विचारार्थ आया था।**. विशेष न्यायालय विधेयक, 1978 **के मामले में निर्णय के बाद, इस** मुद्दे का उत्तर पैरा 31 में उनके लॉर्डशिप द्वारा निर्णायक रूप से दिया गया है, जहां वर्गीकरण को निम्नलिखित शब्दों में बरकरार रखा गया है: "*सेवारत कर्मचारियों और सेवानिवृत्त लोगों के बीच*

वर्गीकरण कानूनी, वैध और उचित वर्गीकरण है और यदि सेवारत कर्मचारियों को कुछ लाभ प्रदान किए जाते हैं और उन लाभों को सेवानिवृत्त कर्मचारियों को नहीं दिया गया है, तो यह सफलतापूर्वक तर्क नहीं दिया जा सकता है कि भेदभाव है जो संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा प्रभावित है। कर्मचारियों की दो श्रेणियां अलग-अलग हैं। वे अलग-अलग वर्ग बनाते हैं और उन्हें समान रूप से स्थित नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, अनुच्छेद 14 का कोई उल्लंघन नहीं है यदि उनके साथ अलग तरह से व्यवहार किया जाता है। (हमारे द्वारा इटैलिक)

31. जब उपर्युक्त सिद्धांतों को वर्तमान मामलों के तथ्यों पर लागू किया जाता है, तो इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि पंजाब विनियमों और हरियाणा विनियमों ने एक वैध वर्गीकरण पर विचार किया है और पुन: नियोजित पेंशनभोगी उन लोगों की तुलना में एक अलग वर्ग का गठन करते हैं जिन्होंने सेवानिवृत्ति प्राप्त नहीं की है। इसलिए, वेतन निर्धारण के मामले में विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों को दिए जा रहे अलग-अलग व्यवहार पर नाक-भौं सिकोड़ने का कोई कारण नहीं है। इसलिए, हम पाते हैं कि सिद्धांत रूप में और उपलब्ध उदाहरणों पर, पंजाब और हरियाणा दोनों विनियम संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 (1) से प्रभावित नहीं हैं। इसलिए, दिनांक 15.4.1997 का आक्षेपित आदेश (1997 के सीडब्ल्यूपी संख्या 13029 में पी -13) को बरकरार रखा जा सकता है।. आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि लोकसभा सचिवालय के अतिरिक्त सचिव के रूप में काम करते हुए एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किए गए श्री जीएल बत्रा द्वारा लिया गया अंतिम वेतन 7,500 रुपये प्रति माह था और उनका वेतन पेंशन और अन्य सेवानिवृत्त लाभों में कटौती करके एचपीएससी के अध्यक्ष के रूप में तय किया जाना था। यह निर्विवाद रहा है कि उन्हें 2,614 रुपये की पेंशन और 751 रुपये प्रति माह की ग्रेच्युटी की अनुमति दी गई थी। पेंशन और ग्रेच्युटी की कुल राशि 3,365 रुपये बनती है, जिसे 7,500 रुपये से घटाया जाना है, जो लोकसभा सचिवालय के अतिरिक्त सचिव के रूप में उनके द्वारा लिया गया अंतिम वेतन था और उनका वेतन 4,135 रुपये तय किया गया है। तदनुसार, याचिकाकर्ता को भुगतान की गई अतिरिक्त

राशि दिनांक 10.3.1998 के वचन पत्र के संदर्भ में वापस की जानी है, जो इस न्यायालय द्वारा पारित 4.3.1998 के अंतरिम आदेश के अनुसरण में प्रस्तुत की गई है।

32. जहां तक 2007 के सीडब्ल्यूपी संख्या 5684 (पंजाब मामले) का संबंध है, दिनांक 7-9-2006 (पी-2) के आक्षेपित आदेश को बरकरार रखा जा सकता है क्योंकि इसने पंजाब विनियमों के विनियम 5 (1) (आई) के संदर्भ में याचिकाकर्ता को उसका वेतन तय करते समय भुगतान की जा रही पेंशन की राशि में सही कटौती की है और याचिका खारिज की जा सकती है।

33. याचिकाकर्ता (ओं) के विद्वान वकील द्वारा प्राथमिक निर्भरता राम फल सिंह (**सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश** के फैसले और एमपी पांडोव के मामले (सुप्रा) **में उपरोक्त फैसले के बाद डिवीजन बेंच द्वारा पारित आदेश** पर रही है। अत्यंत विनम्रता के साथ, हमारे विचार में उपरोक्त निर्णय सही कानून निर्धारित नहीं करता है। एकल न्यायाधीश ने इस धारणा पर कार्यवाही की कि हरियाणा विनियमों के विनियम 6 (2) का पहला परंतुक संविधान के अनुच्छेद 318 के परंतुक के लिए संदर्भित है, जिसमें परिकल्पना की गई है कि एचपीएससी के सदस्यों की शर्तों को उन लोगों के नुकसान के लिए भिन्न नहीं किया जा सकता है जो पहले सरकारी सेवा में रहे हैं। यह देखा गया कि उस मामले में विवाद यह था कि क्या अनुच्छेद 318 के पहले परंतुक का उद्देश्य संविधान के अनुच्छेद 318 के जनादेश के संदर्भ में लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में नियुक्ति से पहले सरकार के तहत एक सदस्य द्वारा प्राप्त मजदूरी की रक्षा और संरक्षण करना है। उस मुद्दे पर विद्वान न्यायाधीश ने निम्नानुसार निष्कर्ष निकाला है:

> " जहां तक प्रथम श्रेणी अर्थात् लोक सेवा आयोग के सदस्यों का संबंध है, जो पहले सरकार के अधीन कर्मचारी थे और 1973 विनियमों के विनियम 6(1) के अंतर्गत पारिश्रमिक से अधिक मजदूरी प्राप्त कर रहे थे, वे भारत के

संविधान के अनुच्छेद 318 के खंड (ख) के अंतर्गत परंतुक द्वारा परिकल्पित संवैधानिक संरक्षण के हकदार हैं। उपर्युक्त के लिए एक स्पष्ट औचित्य है, अर्थात्, यदि लोक सेवा आयोग के ऐसे सदस्य सरकार के अधीन कर्तव्यों का निर्वहन करना जारी रखते तो वे 1973 विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से अधिक मजदूरी प्राप्त करना जारी रखते। यह सुनिश्चित करने के लिए कि सर्वोत्तम उपलब्ध प्रतिभाएं लोक सेवा आयोग की सदस्यता आसानी से स्वीकार करेंगी, यह सुनिश्चित करना अनिवार्य था कि उन्हें तत्काल असाइनमेंट स्वीकार करके कोई मौद्रिक नुकसान नहीं होगा। इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 318 के खंड (बी) के तहत परंतुक में प्रावधान है कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों की सेवा की शर्तें जो पहले सरकार के अधीन कर्मचारी थीं, उनकी नियुक्ति के बाद उनके नुकसान के लिए भिन्न नहीं होंगी। 1973 के विनियमों के विनियम 6(2) के तहत पहले परंतुक में यह भी कहा गया है कि लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य जो 1973 के विनियमों के विनियम 6(1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से अधिक पारिश्रमिक प्राप्त कर रहा था, वह सरकार के अधीन उसके द्वारा लिए गए अंतिम वेतन से अधिक पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार नहीं होगा। यदि ऐसे सदस्य सरकार के अधीन काम करना जारी रखते, तो उन्हें जो परिलब्धियां मिलतीं, उनका भुगतान ऐसे सदस्यों को करना होगा। इसलिए, ऐसे सदस्यों को देय पारिश्रमिक का पता उस मजदूरी से लगाया जाएगा जो ऐसे सदस्य को देय होगी जैसे कि उसने कानून की कल्पना द्वारा, सरकार के तहत सेवा करना जारी रखा हो। लोक सेवा आयोग के ऐसे सदस्यों को लोक सेवा आयोग के सदस्यों के रूप में उनकी नियुक्ति से पहले उनके द्वारा लिया गया अंतिम वेतन भारत के संविधान के अनुच्छेद 318 के खंड (बी) के तहत

परंतुक द्वारा उन्हें दिए गए संवैधानिक संरक्षण का उल्लंघन करेगा। तदनुसार, यह स्पष्ट है कि 1973 विनियमों के विनियमन 6 (2) के तहत पहला परंतुक, जो लोक सेवा आयोग के सदस्य (जो 1973 विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से अधिक स्तर पर सरकार के तहत मजदूरी प्राप्त कर रहा था) को देय पारिश्रमिक को प्रतिबंधित करता है, लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में उनकी नियुक्ति के समय सरकार के तहत उनके द्वारा लिया गया अंतिम वेतन, भारत के संविधान के अनुच्छेद 318 के खंड (बी) के तहत परंतुक का उल्लंघन है. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, 1973 विनियमों के विनियमन 6 (2) के तहत पहला परंतुक, जिसके तहत सरकार के तहत एक पूर्ववर्ती कर्मचारी को देय परिलब्धियां, जो 1973 विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से अधिक वेतन ले रहे थे, सरकार के तहत उसके द्वारा लिए गए अंतिम वेतन तक सीमित है। इसे अलग रखा जा सकता है और तदनुसार, इसे रद्द कर दिया जाता है। ऐसे सदस्य को देय पारिश्रमिक उतना ही होना चाहिए जितना उसे सरकार के अधीन काम करना जारी रखने पर मिलता।

34. हमें ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने एक गलत धारणा पर कार्यवाही की है कि संविधान के अनुच्छेद 318 का उद्देश्य उन सरकारी कर्मचारियों के वेतन की रक्षा करना है जो एचपीएससी के सदस्य के रूप में शामिल होने वाले हैं। हमें डर है कि संविधान के अनुच्छेद 318 का ऐसा आयात नहीं है। किसी भी संदेह को स्पष्ट करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 318 को नोटिस करना उचित हो सकता है जो इस प्रकार है: –

"**318. आयोग के सदस्यों और कर्मचारियों की सेवा शर्तों के संबंध में विनियम बनाने की शक्ति। संघ** आयोग या संयुक्त आयोग के मामले में, राष्ट्रपति और, राज्य आयोग के मामले में, राज्य का राज्यपाल विनियमों द्वारा-

क आयोग के सदस्यों की संख्या निर्धारित करना और उनकी सेवा की शर्तें; और

ख आयोग के कर्मचारियों की संख्या और उनकी सेवा शर्तों के संबंध में `प्रावधान करना:

बशर्ते कि लोक सेवा आयोग के सदस्य की सेवा की शर्तों को उसकी नियुक्ति के बाद उसके नुकसान के लिए भिन्न नहीं किया जाएगा।

35. संविधान के अनुच्छेद 318 के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि संघ लोक सेवा आयोग या संयुक्त आयोग के मामले में राष्ट्रपति या राज्य लोक सेवा आयोग के मामले में राज्यपाल विनियमन द्वारा आयोग के सदस्यों की संख्या और उनकी सेवा की शर्तों का निर्धारण कर सकते हैं। यह आयोग के कर्मचारियों के सदस्यों की संख्या और उनकी सेवा की शर्तों के संबंध में भी प्रावधान कर सकता है।. अनुच्छेद 318 के परंतुक में आगे कहा गया है कि लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य या अध्यक्ष की सेवा की शर्त उसकी नियुक्ति के बाद उसके नुकसान के लिए भिन्न नहीं होनी चाहिए। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण के प्रति अत्यधिक सम्मान के साथ, अनुच्छेद 318 के प्रावधानों का उद्देश्य लोक सेवा आयोग की सेवा में शामिल होने वाले सरकारी कर्मचारी के वेतन की रक्षा करना नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 318 का मूल उद्देश्य यह प्रतीत होता है कि संघ या राज्य लोक सेवा आयोग का कार्यकरण स्वतंत्र रहेगा और इसे किसी बाहरी प्राधिकारी द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिए। उनकी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अनुच्छेद 318 स्पष्ट रूप से प्रावधान करता है कि संघ या राज्य लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य की सेवा की

शर्तों को उसकी नियुक्ति के बाद उसके नुकसान के लिए भिन्न नहीं किया जा सकता है।. यह अनुच्छेद लोक सेवा आयोग के सदस्य या अध्यक्ष की सेवा शर्तों की रक्षा करना चाहता है। इसलिए, यह मानना गलत है कि अनुच्छेद 318 का उद्देश्य सरकारी कर्मचारी की सेवा की शर्तों की रक्षा करना है या इसका उद्देश्य सरकारी विभागों के बीच उपलब्ध सर्वोत्तम प्रतिभा को आकर्षित करना है। इस संबंध में भगत **राम शर्मा बनाम भारत संघ, (1988) सपल एससीसी 30** पर भरोसा किया जा सकता है। उस स्थिति में संविधान के अनुच्छेद 318 के प्रावधानों की व्याख्या की गई। यह माना गया था कि लोक सेवा आयोग के सदस्य को विनियमों में बाद के संशोधन के कारण पेंशन से वंचित नहीं किया जा सकता है। यह इस संदर्भ में है कि एचपीएससी या पीपीएससी के सदस्य की सेवा की शर्तों को संरक्षित करने की मांग की जाती है।

36. दूसरा आधार जिस पर **राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) में फैसला** आगे बढ़ता है, वह यह है कि एक बार जब दो व्यक्ति एक ही सेवा के सदस्य बन जाते हैं, हालांकि अलग-अलग स्रोतों से तैयार किए गए हैं, तो वेतन के प्रयोजनों के लिए कोई भेदभाव नहीं हो सकता है। उपरोक्त सिद्धांत के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर **राम फल सिंह के मामले** (सुप्रा) में भरोसा किया गया है, अर्थात्, **मर्विन कॉन्टिन्हो (सुप्रा); रोशन लाल टंडन (सुप्रा)** और **एसएम पंडित (सुप्रा), रामचंद्र शंकर देवधर के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया गया** है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए विचार के अनुसार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे पदोन्नति के लिए संबंधित अधिकारियों / कर्मचारियों के अधिकारों का मूल्यांकन किया है। जिस कैडर पद से आगे पदोन्नति की मांग की गई थी, उसे सीधी भर्ती के माध्यम से नियुक्ति और फीडर कैडर से पदोन्नति के माध्यम से भी नियुक्त किया

गया था। आगे पदोन्नति के लिए नियम केवल सीधी भर्ती के लिए पदोन्नति की अनुमति देता है। फीडर कैडर को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया था, एक में पदोन्नत और दूसरे में सीधी भर्ती शामिल थी। पदोन्नतियों के बहिष्करण के लिए केवल सीधी भर्ती ही आगे पदोन्नति के लिए पात्र थी। कैडर के पदोन्नत सदस्यों और उसी संवर्ग से संबंधित सीधी भर्ती के बीच कोई अंतर नहीं होने की स्थिति में, उनके मूल के आधार पर वर्गीकरण, जो आगे पदोन्नति से पदोन्नति का हकदार नहीं है, को संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन माना गया था। उपरोक्त निष्कर्ष के आधार पर, विद्वान एकल न्यायाधीश ने माना है कि उनके मूल या व्यापक श्रेणी के बावजूद, जिससे वे संबंधित हैं, लोक सेवा आयोग के किसी भी सदस्य को हरियाणा विनियमों के विनियमन 6 (1) और पंजाब विनियमों के 5 (1) के तहत निर्धारित कम पारिश्रमिक का भुगतान नहीं किया जा सकता है। एकल न्यायाधीश ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि एचपीएससी / पीपीएससी के सभी सदस्य समान कार्य करते हैं और आयोग सामूहिक निकाय के रूप में कार्य करता है। आयोग के सदस्यों को सौंपे गए कर्तव्य को उनकी नियुक्ति के स्रोत के बावजूद विनिमेय भी किया जा सकता है। एकल न्यायाधीश ने यह भी स्वीकार किया है कि दो श्रेणियों के बीच किसी भी उचित अंतर को दर्शाने वाली किसी भी सामग्री के अभाव में, वैधानिक विनियम जो एक श्रेणी के सदस्य के लिए दूसरे सदस्य को देय उच्च परिलब्धियों की तुलना में कम परिलब्धियां प्रदान करते हैं, संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन होगा, जिसे अनुच्छेद 39 (ए) और (डी) के साथ पढ़ा जाता है। विद्वान एकल न्यायाधीश का दृष्टिकोण निम्नलिखित पैराग्राफ से स्पष्ट है: –

> "इस मामले में याचिकाकर्ता सरकार के तहत एक वेतन ले रहा था जो 1973 के विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से कम था।

यह विवाद का विषय नहीं है कि आयोग के सदस्यों द्वारा निर्वहन किए गए कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को उनकी नियुक्ति के स्रोत के बावजूद समान माना जाता है। यह भी विवाद का विषय नहीं है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 316 (1) में व्यक्त दो व्यापक स्रोतों से भर्ती किए गए आयोग के सदस्यों को सौंपे गए कर्तव्य अंतर-परिवर्तनीय हैं। इसलिए, यह निष्कर्ष निकालना अपरिहार्य है कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों को सौंपे गए कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के आधार पर उचित रूप से वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। मर्विन कॉन्टिन्हो के मामले (सुप्रा) और रामचंद्र शंकर देवधर के मामले (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार निष्कर्ष निकाला है कि पदधारी की भर्ती का स्रोत वैध वर्गीकरण का आधार नहीं हो सकता है। प्रतिवादियों की ओर से दायर लिखित बयान में किसी भी औचित्य का खुलासा नहीं किया गया है, जिसके आधार पर लोक सेवा आयोग के विभिन्न सदस्यों को पारिश्रमिक के विभिन्न स्तरों का भुगतान किया जा सकता है। इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकालना अनिवार्य है कि आक्षेपित आदेश जिसमें तत्काल मामले में याचिकाकर्ता रामफल सिंह को 1973 के विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से कम पारिश्रमिक का भुगतान करने की आवश्यकता है, समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धांत का उल्लंघन करता है। इस संबंध में, यह उल्लेख करना उचित होगा कि याचिकाकर्ता को देय परिलब्धियों की गणना करते समय, उसे देय पेंशन की कटौती (सरकार के तहत उसके द्वारा प्रदान की गई सेवा के कारण), साथ ही, उसे भुगतान की गई मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी (सरकार के तहत उसके द्वारा प्रदान की गई सेवा के लिए) के बराबर पेंशन की कटौती 6000 रुपये के निर्धारित पारिश्रमिक से की जा रही है , 1973 विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत।

उपरोक्त कटौतियों, जिसमें पेंशन, साथ ही मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी के बराबर पेंशन शामिल है, सरकार के तहत उसके द्वारा प्रदान की गई सेवा के बदले याचिकाकर्ता की कमाई का गठन करती है।. तत्काल कटौती करने की कार्रवाई याचिकाकर्ता को लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में उसकी नियुक्ति से पहले उसके मौजूदा अधिकारों से वंचित करने के बराबर है। उक्त आय उन कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से संबंधित नहीं है जो लोक सेवा आयोग का सदस्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में निभाता है। याचिकाकर्ता के पारिश्रमिक से उपरोक्त कटौती करना पूरी तरह से अनुचित है क्योंकि उपरोक्त भुगतानों का लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में याचिकाकर्ता के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से कोई संबंध नहीं है। लोक सेवा आयोग के सदस्यों को देय परिलब्धियों के निर्धारण के लिए प्रासंगिक एकमात्र मुद्दा लोक सेवा आयोग के सदस्यों के रूप में उनके द्वारा निर्वहन किए गए कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का है। लोक सेवा आयोग के सभी सदस्य एक एकीकृत निकाय के रूप में सामूहिक रूप से समान कर्तव्यों का निर्वहन करते हैं और लोक सेवा आयोग के सदस्यों के कर्तव्य और जिम्मेदारियां परस्पर परिवर्तनीय हैं, इसलिए, उनके द्वारा निर्वहन किए गए कर्तव्यों के लिए उन्हें अलग-अलग भुगतान करने का कोई औचित्य नहीं हो सकता है। उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकालना स्वाभाविक है कि 1973 विनियमों के विनियम 6(2) के तहत पहला परंतुक, जिसमें एक शर्त की परिकल्पना की गई है, जिसमें लोक सेवा आयोग के सदस्य को 1973 विनियमों के विनियम 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक से कम पारिश्रमिक का भुगतान किया जा सकता है, स्पष्ट रूप से भारत के संविधान के प्रावधानों के विपरीत है और इसलिए, इसे रद्द किया जा सकता है, और तदनुसार, इसे

रद्द कर दिया जाता है। याचिकाकर्ता और अन्य जो 1973 के विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत पारिश्रमिक से कम स्तर पर सरकार के तहत मजदूरी प्राप्त कर रहे थे (लोक सेवा आयोग के सदस्यों के रूप में उनकी नियुक्ति से पहले), उन्हें 1973 के विनियमों के विनियमन 6 (1) के तहत निर्धारित पारिश्रमिक का हकदार माना जाता है, बिना किसी कटौती के।

37. विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनका बारीकी से विश्लेषण करने से पता चलता है कि इनमें से किसी भी निर्णय से ऐसा कोई सिद्धांत स्पष्ट नहीं है। **मर्विन कॉन्टिन्हो के मामले (सुप्रा)** में उच्च पद पर आगे पदोन्नति के लिए सीधी भर्ती और पदोन्नति के बीच भेदभाव करने की मांग की गई थी। माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्रधान मूल्यांकनकर्ताओं के पद पर आगे पदोन्नति के लिए भर्ती के स्रोत के आधार पर भेदभाव को अस्वीकार कर दिया। इसी तरह, **रोशन लाल टंडन (सुप्रा)** के मामले में भी इसी तरह के विचार को दोहराया गया था। तत्काल मामलों में दो अलग-अलग वर्गों को अलग-अलग तरीके से व्यवहार किया गया है। यह **पूर्व सैनिक संघों के परिसंघ (सुप्रा) के मामले में आयोजित किया गया है।** इसलिए, उनका वेतन निर्धारण अलग-अलग आधार पर आगे बढ़ सकता है। किसी भी मामले में, माननीय सुप्रीम कोर्ट की 5 न्यायाधीशों की पीठ ने **जम्मू कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा, (1974) 1 एससीसी 19** के मामले में दिए गए फैसले में रोशन लाल टंडन के मामले (सुप्रा) के साथ-साथ **मर्विन कॉन्टिन्हो के मामले (सुप्रा)** में दिए गए फैसलों **को** खारिज कर दिया है। इसलिए, सार्वभौमिक अनुप्रयोग का कोई कानून नियम नहीं है कि एक बार पदोन्नति और सीधी भर्ती एक कैडर का गठन करती है तो आगे पदोन्नति के लिए कोई भेदभाव नहीं हो सकता है। त्रिलोकी नाथ खोसा के मामले (सुप्रा) **में** यह माना गया है कि शैक्षिक योग्यता आगे पदोन्नति के लिए एक वैध आधार का गठन कर सकती है, भले ही कैडर पदोन्नति और सीधी भर्ती के

दो अलग-अलग स्रोतों से गठित किया गया हो। इसलिए, उपर्युक्त निर्णयों पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता था। उपर्युक्त सिद्धांतों को **केआर लक्ष्मण बनाम कर्णाटक विद्युत बोर्ड, (2001) 1 एससीसी 442 और बिहार राज्य** बनाम **बिहार राज्य में भी स्पष्ट किया गया है। बिहार राज्य +2 व्याख्याता संघ, (2008) 7 एससीसी 231**. कानून के पूर्वोक्त त्याग से यह स्पष्ट है कि पुन: नियोजित पेंशनभोगी सेवारत कर्मचारी की तुलना में कर्मचारियों का एक अलग वर्ग बनाते हैं क्योंकि उन्हें अभी तक पेंशन अर्जित नहीं हुई है।

38. उपर्युक्त कारणों से, पंजाब विनियमों के विनियम 5(1) और हरियाणा विनियम के विनियम 6(2) के परंतुक (i) की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा जाता है और राम फल सिंह के मामले (सुप्रा) में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को निरस्त किया जाता है।. इसी तरह एमपी पांडोव के मामले (सुप्रा) में **लिया गया दृष्टिकोण** भी उपलब्ध नहीं होगा क्योंकि यह मुख्य रूप से **राम फल सिंह के मामले (सुप्रा)** में विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले पर आधारित है। पेंशन, ग्रेच्युटी और अन्य सेवानिवृत्ति लाभों में कटौती के बाद याचिकाकर्ताओं के वेतन को तय करने वाले आक्षेपित आदेशों को वैध माना जाता है। रिट याचिकाएं विफल और खारिज कर दी जाती हैं। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

ओमेश

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)
चंडीगढ़ न्यायिक अकादमी